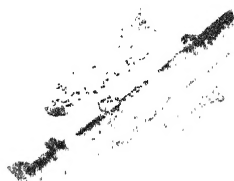
हिन्दी

छन्दः-चन्द्रिका

छन्दः-चन्द्रिका

"दत्त"



पुस्तक-भंडार

पटना और लहेरियासराय

प्रकाशक
न० प्र० मालिक, मैनेजर,
पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय

मुद्रक
हनुमानप्रसाद, मैनेजर,
विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय

दो शब्द

आजकल 'क्रान्ति का युग' है। जिधर देखिये, नई लहरें उठ रही हैं, और पुरानी रूढ़ियों पर पानी फेरने को दौड़ा आ रही हैं। कविता के क्षेत्र में भी यही बात लागू है। नवीन मस्तिष्क पिङ्गल के प्राचीन नियमों को नहीं चाहता; उन्हें 'कविता के मार्ग में रोड़े अटकाना' समझता है। बरसाती मेढ़कों की तरह नित्य नये नये लय पैदा हो रहे हैं। सब 'नई डफली, नया राग' आलापने में ही मस्त हो रहे हैं। बहुत से कवियों ने तो, मालूम होता है, कविता-कामिनी को यति और मात्रा की बेड़ी से विमुक्त कर देने का बीड़ा ही उठा लिया है।

ऐसे स्वच्छन्दता के युग में छन्द का नियम-निर्देश करना बहुत से लोगों को अंकुश की तरह प्रतीत हो सकता है। तथापि इस विषय पर छोटी-बड़ी कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। फिर भी हमने इस काम में क्यों हाथ डाला, इसकी कैफियत दे देना उचित ज्ञात होता है।

कुछ दिन हुए, मुझे एक आज्ञा मिली। बिहार के एक उज्ज्वल और गौरवास्पद रत्न के मुँह से। मुझे बड़ी खुशी हुई। उत्साह भी बढ़ा। आज्ञा थी, "पिङ्गल पर एक ऐसी पुस्तक निकालो जो छात्रों के सामने निःसंकोच भाव से रक्खी जा सके।" मैंने अपना सौभाग्य समझ इस आज्ञा को शिरोधार्य किया। फलतः, यह छोटी सी पुस्तिका एक सप्ताह में लिखी गई और एक दिन में छापी गई। आठवें रोज, यह आपके सामने बन-ठन कर तैयार है। यदि इसके द्वारा उपर्युक्त माँग की पूर्त्ति हुई, तो यह पुस्तक और भी सर्वाङ्ग-सुन्दर होकर निकलेगी और इसमें की रही-सही त्रुटियाँ भी दूर कर दी जायँगी। तबतक यह 'पत्रं पुष्पम्' जो कुछ है, आगे है।

प्रकाशक

विषय सूची

छन्दः-चन्द्रिका



पद्य-परिभाषा

रचना दो प्रकार की होती है—गद्य और पद्य। पद्य में मात्रा और अक्षर नियमित रहते हैं। यह श्रुति-मधुर भी होता है, सुगमता से स्मरण एवं कंठस्थ हो जाता है। संस्कृत-भाषा में बहुत-से ग्रंथ पद्यबद्ध ही हैं; यहाँ तक कि उसमें शब्द-कोष तक कंठस्थ करने की परिपाटी है।

पद्य का महत्त्व

पद्य का महत्त्व इसी से प्रकट है कि प्रायः समस्त प्राचीन भारतीय साहित्य पद्यबद्ध ही है। वेदों की ऋचाएँ भी पद्यबद्ध ही हैं।

हिन्दी के भी अधिकांश प्राचीन ग्रंथ पद्यबद्ध ही हैं अतएव कम-से-कम प्राचीन साहित्य को समझने के लिये तो पद्यों का ज्ञान होना परम आवश्यक है।

छन्दः शास्त्र

कहा जाता है कि शेषनाग ने गरुड़ से छन्दः शास्त्र का वर्णन किया और गरुड़ के द्वारा इस शास्त्र का संसार में प्रचार

हुआ। संस्कृत में सर्प (नाग) को 'पिंगल' कहते हैं, और शेषनाग सर्पों के आचार्य ठहरे, इसलिये इस शास्त्र का नाम ही 'पिंगल' पड़ गया। 'पिंगल' के बिना पद्य का यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकता।

पद्य के गुण

'पद्य' थोड़े ही शब्दों में अधिक भाव प्रकट करता है। यह सुनने में मधुर होता है और इसके कंठस्थ करने में सुभीता है। यह क्रमबद्ध, सुगठित, प्रभावोत्पादक और स्वभावत: प्रिय होता है। 'सूखा वृक्ष आगे खड़ा है', यदि इस वाक्य का अनुवाद संस्कृत-गद्य में 'शुष्क: वृक्ष: तिष्ठत्यग्रे' करने की अपेक्षा 'नीरस तरुरिह विलसति पुरत:'—जैसे संस्कृत-पद्य में किया जाय, तो अधिक आकर्षक और ललित होगा।

पद्य के भाग

प्रत्येक पद्य के चार भाग वा खण्ड होते हैं, जिन्हें चरण कहते हैं। जैसे—

[१]	मेरी भव बाधा हरो,	प्रथम चरण
	राधा नागरि सोइ,	द्वितीय "
	जा तन की झाँईं परै,	तृतीय "
	स्याम हरित दुति होइ॥	चतुर्थ "

—बिहारी

[२] समुत्थान का ज्ञान ही मूल है, प्रथम चरण
इसे भूल जाना बड़ी भूल है, द्वितीय ”
सु-शिक्षा जहाँ है, वहीं सिद्धि है, तृतीय ”
जहाँ सिद्धि होगी, वहीं वृद्धि है। चतुर्थ ”

—मैथिलीशरण गुप्त

नोट—किन्तु ‘कुंडलिया’ और ‘छप्पय’ में छः-छः चरण हुआ करते हैं।

पद्य के भेद

पद्य के मुख्य दो भेद हैं—(१) मात्रिक (२) वर्णवृत्त।

(१) मात्रिक छन्द वह कहलाता है, जिसमें मात्राओं की गिनती हो। जैसे, चौपाई-छन्द का प्रत्येक चरण १६ मात्राओं का होता है, चाहे उसमें कितने ही अक्षर रहें—

“इहाँ राम लछुमनहिं निहारी” ......१२ अक्षर
“बन्दौं राम-नाम रघुवर के” ......११ अक्षर

दोनों पदों में अक्षर यद्यपि न्यूनाधिक हैं, किन्तु मात्राएँ सोलह-सोलह ही हैं।

वर्ण-वृत्तों में वर्ण की ही प्रधानता रहती है, मात्रा की नहीं। जैसे—

दीर्घ श्मश्रु जटा समेत उनके थे केश सारे सित।
होता था मुख दीप्तिमान उनसे यों सर्वदा शोभित।

होके मुक्त नितान्त मेघ-गण से वर्षान्त में ज्यों रवि—
पाता रश्मि समूह-संयुत सदा तेजोमयी है छवि।

—मैथिलीशरण गुप्त

इसमें अक्षरों का सिलसिला बराबर है।

नोट—इसके अतिरिक्त एक वर्ण-मुक्तक छन्द भी है, जिसमें गिने हुए अक्षर रहते हैं—मात्रा वा गणों का विचार नहीं। जैसे, घनाक्षरी इत्यादि। इनका वर्णन आगे मिलेगा।

छन्दों के तीन उपभेद हैं—

(१) सम

(२) अर्द्धसम

(३) विषम

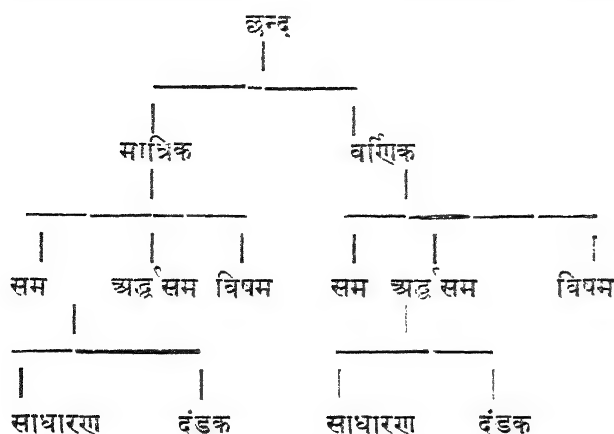
जिनके चारो चरण बराबर हों वे सम; जिनके पहले और तीसरे, तथा दूसरे और चौथे, बराबर हों वे अर्द्ध सम; और जिनके कोई चरण बराबर न हों, वे विषम कहलाते हैं।

'सम' के दो भेद हैं—

(१) साधारण,

(२) दंडक।

मात्रिक छन्दों के प्रत्येक चरण में ३२ या इससे कम मात्रा होने पर वे 'साधारण' और ३२ से अधिक मात्रा होने पर 'दंडक' कहलाते हैं। वर्ण-वृत्तों में छब्बीस अक्षर तक के छन्द 'साधारण' और इससे अधिक के 'दंडक' हैं। नीचे इनका पट्ट-फलक दिया जाता है—



मात्रा गिनने की रीति

मात्रा गिनने की रीति यह है कि प्रत्येक ह्रस्व (एक-मात्रिक) में एक मात्रा और दीर्घ (द्वि-मात्रिक) में दो मात्राएँ गिननी चाहिये। किन्तु संयोग के आदि के अक्षर, अनुस्वार और विसर्ग-युक्त अक्षर, और कहीं-कहीं चरणान्त में विकल्प से दीर्घ मानना और उनका हिसाब द्वि-मात्रिक समझना चाहिये।

२ २ १ १ १ १ १ १ १ १ २ २

यथा उदाहरण—बन्दौं गुरु प द प दुम प रागा—१६ मात्राएँ।

वर्णिक वृत्तों में ही विशेषतया चरणान्त में (विकल्प से) दीर्घ मानने की आवश्यकता होती है। जैसे—

"हैं शृंगार् प्रमुख जितने और शीतांशु-भाग्"।

—मैथिलीशरण गुप्त

यहाँ 'प्र' (संयुक्त-अक्षर) के पहले का अक्षर 'र' दीर्घ माना गया है और चरणान्त में 'ग' दीर्घ माना गया है; क्योंकि यहाँ 'ग' का दीर्घत्व आवश्यक है।

छन्दों में एक वा कई स्थानों में ठहराव की आवश्यकता होती है जिसे विराम वा विश्राम वा यति कहते हैं; और छन्द पढ़ने की चाल का नाम गति है। जैसे—

'रखती थी प्रेमार्द्र सभी को वह अपने व्यवहारों से।
पशुपक्षी भी सुख पाते थे उसके शुद्धाचारों से॥

—मैथिली शरण गुप्त

इस छन्द के पूर्वार्द्ध में 'को' और उत्तरार्द्ध में 'थे' पर यति है।

दशाक्षर-वर्णन

छन्दः ज्ञान के लिये 'दशाक्षरों' को समझना आवश्यक है।

ये दशाक्षर लघु, गुरु, मगण, यगण, रगण, सगण, तगण, भगण, जगण और नगण के संकेत—क्रम से ल, ग, म, य, र, स, त, भ, ज और न—हैं।

एक-मात्रिक (ह्रस्व) * स्वर को 'लघु' कहते हैं जिसका संकेत (चिह्न) '।' है। जैसे, 'हरि'—यहाँ दोनों लघु हैं।

द्वि-मात्रिक (दीर्घ) स्वर का नाम 'गुरु' है, जिसका संकेत (चिह्न) 'ऽ' है। जैसे, 'वाणी'—यहाँ दोनों गुरु हैं।

---

* म स्त्रिगुरु स्त्रिलघुश्चनकारो, भादि गुरुः पुनरादि लघुर्यः। जो गुरु मध्य गतो र ल-मध्यः सो ऽन्त गुरुः कथितो ऽन्त लघु स्तः॥ (छंदोमंजरी)

गणों का विचार

तीन-तीन अक्षरों के शब्द 'गण' कहलाते हैं।

जिस गण में तीनों अक्षर गुरु हों, वह म-गण
जिस गण में तीनों अक्षर लघु हों, वह न-गण
जिस गण में आदि गुरु और अंत के दो लघु हों, वह भ-गण
जिस गण में आदि लघु और अंत के दो गुरु हों, वह य-गण
जिस गण में दोनों अक्षर गुरु और बीच में लघु हों, वह र-गण
जिस गण में दोनों अक्षर लघु और बीच में गुरु हों, वह ज-गण
जिस गण में आदि के दो अक्षर गुरु और अंत का अक्षर लघु हो, वह त-गण
और, जिस गण में आदि के दो अक्षर लघु और अंत का अक्षर गुरु हो, वह स-गण
} कहलाता है।

इन गणों के क्रम से आठ देवता हैं, * जिनके फल भी अलग-अलग होते हैं। नीचे फलक से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

---

* मो भूमिः श्रिय मातनोति यजलं वृद्धिं रचाग्निर्मृतिं,
सो वायुः परदेश दूर गमने त व्योम शून्यं फलम्।
जः सूर्यो रुजको ददाति विपुलं भेन्दुर्यशो निर्मलं,
नो नाकश्च सुखप्रदं फलमिदं प्राहुर्गणानां बुधाः॥
(छंदोमंजरी)

	गण	देवता	फल	रूप	उदाहरण
ये चारो शुभ गण हैं	म गण	पृथ्वी	लक्ष्मी	SSS	माताजी = तीन गुरु
	न गण	स्वर्ग	सुख	।।।	विमल = तीन लघु
	भ गण	चन्द्रमा	यश	S ।।	वारिज=एक गुरु दो लघु
	य गण	जल	वृद्धि	। SS	भवानी=एक लघु दो गुरु
ये चारो अशुभ हैं	र गण	अग्नि	मृत्यु	S । S	राधिका=एक गुरु + एक लघु + एक गुरु
	ज गण	सूर्य	शोक	। S ।	नरेंद्र=एक लघु + एक गुरु + एक लघु
	त गण	आकाश	शून्य	S S ।	शालीन=दो गुरु + एक लघु
	स गण	वायु	भ्रमण	।। S	कमला - दो लघु + एक गुरु

नोट—छन्दों के प्रारंभ में शुभ गण रखने से अच्छा फल मिलता है और अशुभ गणों के रखने से हानि।

भगवान् पिंगलाचार्य ने अपने प्रारम्भिक सूत्र में ही गुरु-शिष्य-संवाद रूप से इन गणों का जैसा वर्णन किया है उसका भी पाठकों को दिग्दर्शन करा देना यहाँ अनुचित न होगा।

म न भ य सुखदा
- (क) धी-श्री-स्त्री म् = म गण में तीनों गुरु हैं यथा धी श्री स्त्री
- (ख) नहस न् = न गण में तीनों लघु, यथा न ह स
- (ग) किंवद भ् = भ गण में एक गुरु दो लघु यथा किंवद
- (घ) वरासा य् = य गण में एक लघु दो गुरु, यथा वरासा

रज तस दुखदा
- (च) कागुहार् = र गण में बीच में लघु, यथा कागुहा
- (छ) कदास ज् = ज गण में बीच में गुरु, यथा कदास
- (ज) सातेक्व त् = त गण में आदि में दो गुरु, यथा सातेक्व
- (झ) वसुधा स् = स गण में आदि में दो लघु, यथा वसुधा

आठों गणों को सुगमता से याद रखने के लिये नीचे एक पद्य दिया जाता है—

आदि मध्य अवसान राखि लघु शेष गुरू दे।
य गण र गण अरु त गण बनावहु नियम छंद के॥
पुनि तहँवै गुरु राखि शेष लघु भ ज स युक्त गण।
तीनों गुरु हैं मगण नगण तीनौं लघु धरु मन॥

मात्रिक गण

प्राचीन ग्रंथों में कहीं-कहीं मात्रिक छन्दों का लक्षण मात्रिक गणों द्वारा भी पाया जाता है। वे गण पाँच हैं, ट गण, ठ गण, ड गण, ढ गण, और ण गण। छः मात्राओं का ट गण, ५ मात्राओं का ठ गण, ४ मात्राओं का डगण, तीन मात्राओं का ढ गण और २ मात्राओं का ण-गण होता है। इनके उपभेदों की संख्या भी बहुत है, उन सब का यहाँ लिखना निरर्थक है क्योंकि अब कवि लोग उनके स्थानों में संख्या-सूचक शब्दों से ही काम ले लेते हैं।

दग्धाक्षर वर्णन

दग्धाक्षर उन अक्षरों का नाम है जिनको कविता के प्रारंभ में रखना अशुभ माना जाता है। इन्हें अशुभाक्षर भी कहते हैं। ये दग्धाक्षर १९ हैं, यथा—

ङ, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, प, फ, ब, भ, म, र, ल, ब, ष और ह।

नोट—किन्तु उपर्युक्त १९ अक्षरों में भी कवियों ने झ, ह, र, भ और ष इन पाँच अक्षरों को ही विशेष दोषावह माना है जैसे—

दीजै भूलि न छन्द को, आदि झ ह र भ ष कोय।
दग्धाक्षर के दोष ते, छन्द दोष जुत होय॥

(छन्दःसार)

यदि पद्य के आदि में मंगल-वाची या देवता-वाची शब्द रहे, अथवा प्रथम अक्षर गुरु (दीर्घ) हो तो दग्धाक्षर का दोष नहीं लगता और उसमें गणागण के विचार की भी आवश्यकता नहीं। जैसे—

मंगल सुर वाचक शबद, गुरु होवै पुनि आदि।
दग्धाक्षर के दोष नहि, अरु गण दोषहुँ वादि॥

(छन्दःप्रभाकर)

उदाहरण—

१—झंडी देशभक्ति की लेकर ऐ नवयुवको! हो तैयार,
अटल रहो अपने निश्चय पर, होगा बेड़ा तबही पार॥

यहाँ 'झं' के दीर्घ होने से दग्धाक्षर का दोष नहीं है।

२—हरि कर मंडन सकल दुख खंडन,
मुकुर महि मंडन को कहत अखंड मति।　　(केशव)

यहाँ 'हरि' देववाची शब्द है, अतः निर्दोष है।

३—रमा-रमन पद बंदि बहोरी।　　(रामायण)

यहाँ भी 'रमा' शब्द देव-वाची है, अतएव दोष नहीं।

४—भलहुँ पोच सब विधि उपजाये॥　　(रामायण)

यहाँ 'भलहुँ' पद मंगल-वाची है, इसलिये दग्धाक्षर का दोष नहीं है।

किन्तु यह सब फुटकर और नर-काव्य के लिये है। बड़े-बड़े ग्रन्थों के प्रणयन और ईश्वर के गुणानुवाद में इन सब का विचार नहीं किया जाता।

प्रत्यय

जिसके द्वारा छन्द की मात्राएँ और भेद-प्रभेद जाने जायँ, उसे प्रत्यय कहते हैं।

प्रत्यय नौ हैं—१ सूची, २ प्रस्तार, ३ नष्ट, ४ उद्दिष्ट, ५ पाताल, ६ मेरु, ७ खंडमेरु, ८ पताका और ९ मर्कटी।

नोट—(१) कोई-कोई मर्कटी का एक उपभेद 'सूचिका' भी मानते हैं। (२) किसी-किसी के मत में सूची, प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, मर्कटी और पताका ये छः ही प्रत्यय हैं, जिन्हें 'षट्प्रत्यय' कहते हैं।

यहाँ हम उन प्रत्ययों का दिग्दर्शन मात्र करा देते हैं, क्योंकि विद्यार्थियों के लिये उनका विशेष प्रयोजन नहीं।

१ सूची

सूची—वह प्रत्यय है जिसके द्वारा मात्रिक छन्दों की मात्राओं और वर्णिक छन्दों के अक्षरों की संख्या मालूम हो।

मात्रिक सूची बनाने में पिछली दो-दो मात्राएँ जोड़ी जाती हैं और वर्णिक सूची बनाने में शुरू से ही अंक दूना होता चला जाता है। जैसे—

क्रम-संख्या	१	२	३	४	५
मात्रिक सूची	१	२	३	५	८
वर्णिक सूची	२	४	८	१६	३२

स्पष्ट—इससे सिद्ध हुआ कि ५ मात्राओं के भेद से ८ प्रकार के भिन्न-भिन्न मात्रिक छन्द बन सकते है और ५ वर्णों के भेद से ३२ प्रकार के भिन्न-भिन्न वर्णिक छन्द बन सकते हैं। इसी प्रकार और भी जानना चाहिये।

२ प्रस्तार

प्रस्तार—उस प्रत्यय का नाम है जिसके द्वारा छन्दों के भिन्न-भिन्न रूप दिखलाये जा सकें। प्रस्तार बनाने की यह रीति है–

क्रिया—आदि में जहाँ गुरु मिले उसके नीचे लघु का चिह्न संकेत करो। फिर दाहिनी ओर ऊपरवाले चिह्नों की नकल उतारो और बाईं ओर जितने स्थान खाली मिलें उनमें गुरु के चिह्नों को भरते जाओ। ऐसा करते-करते अन्त में सब लघु मात्राएँ आ जायँगी।

स्मरण रहे कि—

(१) वर्णिक प्रस्तार के प्रत्येक भेद में उतने ही वर्ण आते हैं और मात्रिक प्रस्तार के प्रत्येक भेद में उतनी ही मात्राएँ आती हैं।

(२) मात्रिक प्रस्तार में यदि बाईं ओर गुरु रखने से एक मात्रा बढ़ जाय तो वहाँ लघु ही रखना चाहिये।

(३) वर्णिक प्रस्तार में पहला भेद सदैव गुरुओं का रहता है। मात्रिक प्रस्तार के समकल * में पहला भेद सदैव गुरुओं का और विषमकल में पहला भेद लघु से प्रारम्भ होता है। उदाहरण—

३ वर्णों का प्रस्तार	६ मात्राओं का प्रस्तार
१—SSS	१—SSS
२—ISS	२—IISS
३—SIS	३—ISIS
४—IIS	४—SIIS
५—SSI	५—IIIIS
६—ISI	६—ISSI
७—SII	७—ISIS
८—III	८—IIISI
	९—IISS
	१०—IISII
	११—ISIII
	१२—SIIII
	१३—IIIIII

* समकल उसे कहते हैं जिसमें मात्राओं की संख्या सम (जैसे, दो, चार, छः आदि) हो। इसके विपरीत, जिसमें मात्राओं की संख्या विषम (जैसे, तीन, पाँच, सात आदि) हो उसे विषमकल कहते हैं।

५ मात्राओं का प्रस्तार

१—ISS

२—SIS

३—IIIS

४—SSI

५—IISI

६—ISII

७—SIII

८—IIIII

वर्णिक प्रस्तार से जाना जाता है कि किसी भेद के समान चारो चरण होने से कोई एक वर्णवृत्त छन्द बन सकता है।

जहाँ प्रस्तार भेद से चारो चरणों में समानता न रहे, वहाँ मात्रिक छन्द समझना चाहिये।

३ नष्ट

छन्दों के किस भेद का कौनसा रूप है, यह जिस प्रत्यय की सहायता से बतलाया जा सके, वह नष्ट कहलाता है।

क्रिया—वर्णिक नष्ट में सूची के आधे अंक को और मात्रिक नष्ट में पूरा अंक स्थापित करो। इस अंक में से प्रश्नांक घटा कर शेष जो बचे उससे दाहिनी ओर से बाईं ओर को जो अंक घट सकते हों उन्हें गुरु कर दो। मात्रिक में जहाँ-जहाँ गुरु बने उनके आगे की एक-एक मात्रा मिटा दो। यथा—

उदाहरण—वार्णिक नष्ट

४ वर्णों में १० वां रूप—

४ वर्णों की सूची १६ में से १० घटाया। शेष ६ में से ४ और २ ही क्रम पूर्वक घट सकते हैं इसलिये दोनों को गुरु कर दिया, सूची १६ को आधे आठ को पूर्णांक मान कर स्थापित किया—

अर्द्ध सूची—१ २ ४ ८ पूर्णांक

चिह्न— । । । । १६

उत्तर— । ऽ ऽ ।

यही १० वां भेद हुआ—।ऽऽ।

मात्रिक नष्ट

६ मात्राओं में सातवाँ भेद,

६ मात्राओं की सूची १३ में से ७ घटाया, शेष ६ में से ५ और १ ही घट सकते हैं, इन दोनों को गुरु कर दिया और उनके आगे की एक-एक मात्रा मिटा दी

सूची— १ २ ३ ५ ८ १३

चिह्न— । । । । । ।

ऽ । ऽ ।

यही उत्तर—ऽ।ऽ। हुआ

इसके निकालने का संक्षेप लक्षण यह है—

विषम पाय गुरु सम लघु लैये। आधी करि करि नष्ट बतैये।

४ उद्दिष्ट

जिस प्रत्यय के द्वारा छन्दों के रूप से उनका भेद कहा जाय, उसका नाम उद्दिष्ट है।

क्रिया—वर्णिक उद्दिष्ट निकालने में पहले आधी सूची बनाकर स्थापित करो। उन अंकों के नीचे रूप के चिह्नों को लिखो। गुरु के चिह्नों के ऊपर जो-जो अंक हों, उन्हें जोड़ कर अर्द्ध-सूची के पूर्णांक में से घटा लो, जो बचे वही भेद है।

मात्रिक में पूर्ण सूची निकाल कर उसकी संख्या में से उन्हीं

अंकों को जोड़कर घटावे जो कि वर्णिक उद्दिष्ट में कहे गये हैं। जहाँ-जहाँ गुरु पड़े वहाँ वहाँ के अगले अंक को हटा दो।

उदाहरण—वर्णिक उद्दिष्ट

४ वर्णों में ।ऽऽ। यह कौन सा भेद है—

अर्द्धसूची—१ २ ४ ८ १६

। ऽ ऽ । पूर्णांक

अब गुरुओं के ऊपर दो और चार हैं इन दोनों को जोड़ा ६ हुआ, पूर्ण संख्या १६ में से ६ घटाया (१६–६)=१० बचा

उत्तर = १० वाँ भेद है।

मात्रिक उद्दिष्ट

६ मात्राओं में ऽ।ऽ। यह कौन सा भेद हुआ—

पूर्णसूची—१ २ ३ ५ ८ १३

ऽ × । ऽ × ।

गुरु के अंक के बाद २ और ८ हटाओ। गुरु के ऊपर १ और ५ है, दोनों को जोड़ा ६ हुआ। अंतिम संख्या १३ में से ६ घटाओ ७ बचा

उत्तर = ७ वाँ भेद।

५ पाताल

उस प्रत्यय का नाम है जिससे छन्दों के भेद तथा लघु और गुरु की संख्या का बोध हो।

वर्णिक पाताल की क्रिया—जितने वर्ण के वृत्त हों, उतने अंकों को क्रम पूर्वक एक कोठे में भरो। फिर दूसरे कोठे में उनकी सूची लिखो। तीसरे कोठे में १ से स्थापित कर क्रम से दूने-दूने अंकों को भरो और चौथे कोठे में तीसरे कोठे के अंकों को पहाड़े के क्रम से बढ़ाते हुए अंक लिख चलो।

मात्रिक पाताल की क्रिया—जितनी मात्राएँ हों, उतनी संख्या को पहले कोठे में रक्खो, दूसरे कोठे को सूची से भरो उसके बाद

तीर चिह्नाङ्कित प्रक्रिया से तीन-तीन संख्याओं को जोड़ते हुए अगले कोठे में अंक भरते जाओ ।

वर्णिक पाताल

१	२	३	४	५	६
२	४	८	१६	३२	६४
१ (×१)	२ (×२)	४ (×३)	८ (×४)	१६ (×५)	३२ (×६)
१	४	१२	३२	८०	१९२

वर्णिक पाताल से ज्ञात हुआ कि ६ वर्ण के ६४ वृत्त हो सकते हैं। जिनमें ३२ के आदि और अंत में लघु तथा ३२ के आदि और अंत में गुरु हो सकते हैं । सम्पूर्ण वृत्तों में १९२ लघु और १९२ गुरु हैं ।

मात्रिक पाताल

१	२	३	४	५	६
१	२	३	५	८	१३
१	२	५	१०	२०	३८

मात्रिक पाताल से विदित होता है कि ६ मात्राओं के १३ छंद

बन सकते हैं। ३८ लघु और उसकी बाईं ओर की संख्या (२०) गुरु मात्रा है।

६ मेरु

मेरु उस प्रत्यय को कहते हैं जिससे छन्दों की संख्या और लघु-गुरुओं का विस्तार मालूम हो।

वर्णिक मेरु

इच्छित कोठे के आदि और अंत में एक-एक रखते जाओ फिर उसके दायें और दूसरे-छोर के बायें १, २, ३, ४ इत्यादि अंक क्रम से लिखो। शेष घरों में टेढ़ी गति से (दाहने या बायें के निकटवर्ती अंकों को जोड़ते हुए) अंक रखकर सब कोठों को भर दो।

मात्रिक मेरु

पहले १, २, ३ इत्यादि अंक लिखो, तब दो-दो सम कोठों के अंत के कोठों को १ अंक से भरो। फिर ऊपर के बचे कोठेमें १ लिखकर सामने के १+१=२ २+१=३, ३+३=६ इस प्रकार से अंकों को जोड़ते हुए शेष कोठों को भर दो।

वर्णिक मेरु—

१	१			
१	२	१		
१	३	३	१	
१	४	६	४	१

मात्रिक मेरु—

					१	१
				१	१	२
				२	१	३
			१	३	१	४
			३	४	१	५
		१	६	५	१	६
		४	१०	६	१	७
	१	१०	१५	७	१	८
	५	२०	२१	८	१	९
१	१५	३५	२८	९	१	१०

इस यंत्र से यह विदित होता है कि—

१० मात्राओं के छंद में
१ छंद=५ गुरु का
१५ छंद=४ गुरु दो लघु
३५ छंद=३ गुरु ४ लघु
२८ छंद=२ गुरु ६ लघु
९ छंद=१ गुरु ८ लघु
१ छंद=सब लघु।

कुल= ८९

१० मात्राओं से इस प्रकार ८९ छंद बन सकते हैं। इसी प्रकार और भी जानो। इसके अंतर्गत खंड मेरु के और भी कितने ही भेद हैं, जो विस्तार भय से छोड़ दिये गये हैं।

७ पताका

पताका उस प्रत्यय का नाम है जिससे गुरुओं के छन्दोभेद अलग अलग दृष्टिगत होते हैं। अर्थात् "मेरु से जो रूप जाना जाता है, वह प्रस्तार के किस भेद में से है" यह जिस प्रत्यय से ज्ञात होता है, उसी का नाम पताका है।

पहले के प्रत्ययों से पाठक छन्दों के रूप से भेद जान ही चुके हैं, अतएव इसे विस्तार पूर्वक लिखने की जरूरत नहीं।

८ मर्कटी

मर्कटी, छन्दों के अलग-अलग वर्ण, गुरु-लघु, वृत्त-भेद, मात्रा की संख्या प्रकट करती है। इसीके अंतर्गत लघु-गुरु की संख्या बतानेवाली सूचिका प्रत्यय है।

इन प्रत्ययों से विदित होता है कि छन्दों की संख्या असीम है। नित्य नये-नये छन्दों के प्रकट होने पर कोई यह भले ही कह दे कि ये छन्द पिङ्गल-कथित नहीं हैं। किन्तु प्रस्तार के हिसाब से ये छन्द कभी पिङ्गल की सीमा से बाहर नहीं हो सकते। यद्यपि लोग आज-कल इन प्रत्ययों पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं समझते तथापि विद्यार्थियों के ज्ञान-मात्र के लिये इनका संक्षिप्त परिचय देना यहाँ

आवश्यक समझा गया। बहुत विद्वान तो इन प्रत्ययों में से केवल सूची, प्रस्तार, उद्दिष्ट और नष्ट इन चारों को ही मुख्य मानते हैं, शेष प्रत्यय कौतूहलार्थ ही हैं।

अनुप्रास

अनुप्रास कविता के अंतिम चरणों में स्थित अक्षरों या मात्राओं की समानता का नाम है। यद्यपि यह विषय अलंकार से सम्बंध रखता है तथापि हिन्दी की कविताओं में प्रायः अनुप्रास का ही प्राधान्य रहा करता है, इसलिये इसका कुछ वर्णन करना यहाँ पर आवश्यक है।

अनुप्रास मनुष्यों को स्वभावतः प्यारा मालूम होता है। तुक (अनुप्रास) मिलने से नीरस कविता भी सुनने में अच्छी मालूम होती है। संस्कृत के कवियों ने तुकांत कविताएँ प्रायः नहीं की हैं। उच्च काव्य कलाभिज्ञ कविता में भाव और अर्थालंकार को प्रधान मानते हैं और शब्दालंकार को जिसमें तुकबंदी भी शामिल है, गौण मानते हैं।

यह मत बहुत अंशों में ठीक भी है। इसी मत को मान कर बंगाल के प्रसिद्ध कवि सर माइकेल मधुसूदन दत्त ने भिन्न-तुकांत कविता में ही 'मेघनाद-वध' महाकाव्य की रचना कर बंगला भाषा के कविता-युग में युगान्तर उपस्थित कर दिया। हिन्दी के कुछ विद्वानों ने भी भिन्न-तुकांत कविता की ओर ध्यान दिया है और उनमें 'प्रिय-प्रवास' अपना विशेष स्थान रखता है। 'मेघनाद-वध' का हिन्दी अनुवाद भी भिन्न-तुकांत और समवृत्त में हुआ है।

किन्तु कविता की प्रारंभिक अवस्था प्रायः तुकबन्दी ही रहा करती है और लोग जबतक अर्थालंकार तथा भाव-मात्र से आनंद अनुभव करने योग्य नहीं हो लेते तबतक तो तुकान्त कविता ही एक ऐसी चीज है जो साधारण लोगों का ध्यान कविता की ओर आकृष्ट करती है। यही कारण है कि अंगरेजी, उर्दू, फारसी और हिन्दी भाषा की प्रारंभिक कविताओं में 'तुक' का बाहुल्य है।

अनुप्रास के उत्तम, मध्यम, निकृष्ट, और त्याज्य, ये चार भेद हैं।

(१) यदि पद्य के अंत में दो गुरु आ पड़ें तो वहाँ पाच मात्राओं का समस्वर मिलना उत्तम, चार का मध्यम, शेष निकृष्ट, और एक स्वर का मिलना तो सर्वथा त्याज्य है।

(२) यदि पद्य के अंत में एक लघु और एक गुरु अथवा एक गुरु और एक लघु हो तो वहां भी इसी नियम को लागू समझना चाहिये।

(३) यदि पद्य के अंत में लघु आ पड़ें तो चार मात्राओं का मिलना उत्तम, दो का मध्यम और एक का निकृष्ट समझना चाहिये।

(१) उदाहरण—

उत्तम—

हंस और मीनों से उसने जल में तरना सीखा था।
शीतल और सुगन्ध पवन से मन्द विचरना सीखा था।

होम शिखा से सद्भावों को हिय में भरना सीखा था।
आश्रम के उन्नत विटपों से पर हित करना सीखा था।

मध्यम—

अमिय मूरि मय चूरन चारू,
समन सकल भव रुज परिवारू॥

(तुलसी)

निकृष्ट

हिन्दू बरत एकादसि साधै दूध सिंघाड़ा से ती
अन को त्यागै मन नहिं हटकै पारन करै सगो ती॥

(कबीर)

(२) उदाहरण—

उत्तम—

कुल की सी करनी कुलीन की सी कोमलता,
सील की सो संपति सुसील कुल कामिनी।
दानको सो आदर उदारताई सूर कीसी,
गुन की लुनाई गजगति गज गामिनी॥
ग्रीषम को सलिल सिसिर के सो घाम 'देव',
हेमँत हँसत जलदागम की दामिनी।
पूनो को सो चन्द्रमा प्रभात को सो सूरज,
सरद सो बासुर वसन्त कीसी जामिनी।

(३) उदाहरण—

उत्तम—जय हनुमान ज्ञान गुन सागर,
जय कपीस तिहुँ लोक उजागर ।
(तुलसी)

विस्तार भय से मध्यम निकृष्ट और त्याज्य के उदाहरण नहीं दिये जा सके ।

कविता की भाषा

'भाव अनोखो चाहिये, भाषा कोऊ होय ।'

भाव ही कविता की जान है। कविता में वर्णित भाव उत्तम होना चाहिये, भाषा चाहे कोई भी हो । तथापि विद्वानों का विचार है कि कविता की रचना ऐसी भाषा में होनी चाहिये, जिसे सर्व-साधारण समझ सके । इसीलिये खड़ी बोली, जो लोगों की बोल-चाल की भाषा है, कविता के उपयुक्त समझी जाती है ।

पहले के कविलोग विशेषत: व्रजभाषा में ही कविता किया करते थे । जायसी और तुलसीदास ने पूर्वी हिन्दी—(अवध के आस पास की भाषा) में कविता की है। सूर, विहारी, देव, दास, घनानंद इत्यादि कवियों ने व्रजभाषा में कविता करके साहित्य को गौरवान्वित किया है। आजकल भी व्रजभाषा में बाबू जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' तथा वियोगी हरि' प्रभृति अच्छी कविता किया करते हैं ।

किन्तु समय ने पलटा खाया । धीरे धीरे लोग खड़ी बोली की

कविता पसंद करने लगे। खुशरो तथा भूषण नींव डाली और उसके आधार पर धीरे-धीरे कविता की इमारत खड़ी होने लगी। ब्रजभाषा समझने में बड़ी-बड़ी दिक्कतें होने लगीं; क्योंकि वह प्रान्तीय भाषा थी। कवियों का झुकाव खड़ी बोली की ओर हुआ। सरस्वती के श्रद्धेय संपादक पं. महावीर प्रसाद जी द्विवेदी ने कवियों को प्रोत्साहित किया। खड़ीबोली में कविता की उन्नति तथा प्रचार के लिये 'सरस्वती' का विशेष हाथ है।

खड़ीबोली आज राष्ट्र भाषा के पद पर आसीन होने योग्य समझी जारही है। इसको भारत के प्रत्येक प्रान्त के लोग बड़ी सुगमता से समझ जाते हैं। खड़ीबोली की कविता में विशेष दूर से अन्वय नहीं करना पड़े—अर्थ समझने में खींचा-तानी की जरूरत न पड़े—इस बात पर अब लोग विशेष ध्यान देने लगे हैं। कोई-कोई कविता में खड़ी बोली के क्रिया-पद, विभक्ति-पद और प्रत्ययों को भी ज्यों का त्यों रखना चाहते हैं।

यहाँ इतना कहना आवश्यक है कि कविता चाहे ब्रज-भाषा में की जाय या खड़ीबोली में, किन्तु अर्थ सुस्पष्ट हो—उसमें भाव इस प्रकार झलकता रहे जैसे स्वच्छ काँच के बर्त्तन में रक्खा हुआ जल। पद-विन्यास शुद्ध, स्पष्ट तथा ललित हो। व्यर्थ शब्दों को भर कर पद-पूर्त्ति करना अथवा तुक मिलाने के लिये किसी अनावश्यक शब्द का रख देना कोरी तुकबंदी है, सच्ची कविता नहीं। पद-विन्यास मात्र से जिस कविता ने मन हरण नहीं किया, वह कविता

नहीं। किन्तु साथ ही साथ भाव की उत्तमता पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

छन्दों के लक्षण

अब हम कुछ प्रचलित छन्दों के लक्षण तथा उदाहरण लिखते हैं। प्रस्तार-भेद से तो छन्दों की संख्या अनंत है और उन सब का वर्णन करना कठिन ही नहीं, वरन असम्भव है। इसलिये इस छोटी सी पुस्तिका में केवल प्रधान-प्रधान छन्दों के लक्षण लिखे जाते हैं।

मात्रिक छन्द

१ तोमर।

तोमर गला × कल सूर।

'तोमर' छन्द का प्रत्येक चरण बारह मात्राओं का होता है। अंत में एक गुरु तथा एक लघु का होना आवश्यक है।

तब चले बान कराल, फुँकरत जनु बहु ब्याल।
कोपे समर श्रीराम, चल विशिख निशित निकाम॥
अवलोकि खरतर तीर, मुरि चले निशिचर वीर।
भै क्रुद्ध तीनों भाइ, जो भागि रन ते जाइ॥

(तुलसी)

× गला=(अंत में) गुरु, लघु।

सूर=सूर्य अर्थात् १२ कल (मात्राएँ)

२ प्रतिभा

प्रतिभा छन्द के प्रत्येक चरण में चौदह-चौदह मात्राएँ होती हैं और आदि में लघु अवश्य होता है। इसका दूसरा नाम विजात है।

चरित है मूल्य जीवन का।
वचन प्रतिबिम्ब है मन का॥
सुयश है आयु सज्जन की।
सुजनता है प्रभा धन की॥

(पं० रामनरेश त्रिपाठी)

३ सखी

सखि चौदह अंत मया की

सखी—१४ मात्राओं की होती है। अंत में मगण वा यगण रक्खा जाता है। यथा—

सब घर-घर ते ब्रजनारी। दधि गोरस बेचन हारी॥
सब जूथ जूथ मिलि चीन्हा। जमुना तट मारग लीन्हा॥

—दान लीला

४ चौपई

'पन्द्रह कल चौपइ गल अंत'

चौपई के प्रत्येक चरण में १५ मात्राएँ रहती हैं। अंत में एक

गुरु और एक लघु का होना आवश्यक है। (इसका दूसरा नाम 'जयकरी' भी है।)

एक काल अति रूप निधान, खेलन को निकसे चौगान ॥
हाथ धनुष अति सुन्दर रूप, संग लिये सब सोदर भूप ॥

५ चौपाई

"सोलह कल 'जत' बिनु चौपाई"

चौपाई के प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं। किन्तु नियम यह है कि इसमें जगण और तगण न हों।

शोचिय विप्र जो वेद विहीना।
तजि निजधर्म विषय लवलीना ॥
शोचिय नृपति जो नीति न जाना।
जेहि न प्रजा प्रिय प्राण समाना ॥

(रामचरित मानस)

नोट—इसीके पादाकुलक इत्यादि कई भेद होते हैं। चौपाई में चार-चौकल बराबर आवें तो 'पादाकुलक' है। चौकल (चार मात्राओं की चौकड़ी) ५ प्रकार का होता है।

(१) ऽ ऽ (दो गुरु) (२) ।। ऽ (दो लघु एक गुरु) (३) । ऽ । (एक लघु एक गुरु एक लघु) (४) ऽ ।। (एक गुरु दो लघु) और (५) ।। ।। चारो लघु।

आठ-आठ मात्राओं पर विश्राम से १६ मात्रा का छंद पद्धरि होता है। इसके अंत में जगण रहता है। जैसे—

वैसह बरीस षोड़स नरीन्द।
आजान बाहु भुअ लोक यंद॥
संभरि नरेस सोमेस पूत।
देवंत रूप अवतार धूत॥

(रासो)

६ शक्ति

"अठारह कला लादि शक्ती 'सरन'"

इसके प्रत्येक चरण में १८ मात्राएँ होती हैं। आदि में लघु तथा अंत में सगण, रगण वा नगण होता है। जैसे—

शिवा शंभु के पांव पंकज गहौं।
विनायक सहायक सबै दिन चहौं।
भजौं राम आनंद के कंद को।
दिया जिन हुकुम पौन के नंद को

(बख्शीराम कृत—हनुमन्नाटक)

नोट—फारसी के प्रसिद्ध कवि शेख सादी ने 'करीमा' की रचना इसी छंद में की है। यथा—

करीमा बबख्शाय बर हालमा।
कि हस्तम असीरे कमंदे हवा॥

७ पीयूषवर्षी

इसके प्रत्येक चरण में १९ मात्राएँ रहती हैं, अंत में एक लघु तथा एक गुरु का होना आवश्यक है। बारह मात्राओं पर विश्राम होता है। जैसे—

शत्रुओं का ह्रास हो जिस नीति से।
दूर मेरा त्रास हो जिस रीति से॥
बस उसी सदुपाय को ले हाथ में।
नाथ! आना वीरता के साथ में॥

—रसिकेन्द्र

८ प्लवंगम

'प्लवंगम' छन्द के प्रत्येक चरण में इक्कीस मात्राएँ रहती हैं जिनके आदि में गुरु और अंत में एक जगण (।ऽ।) और एक गुरु (ऽ) का रहना आवश्यक है। ८ मात्राओं पर विश्राम होता है। जैसे—

गादि बसू दिसि राम जगंत प्लवंग में,
धन्य वही जो, रंगै राम रस रंग में।
पावन हरिजन संग सदा मन दीजिये,
राम कृष्ण गुण ग्राम नाम रस भीजिये॥

(भानु)

९ कुण्डल

यह बाईस मात्राओं का होता है। अंत में दो गुरु रहते हैं। बारह मात्राओं पर विश्राम होता है। जैसे—

मेरे गिरिधर गुपाल दूसरा न कोई।
संतन ढिग बैठि-बैठि लोक लाज खोई॥
अबतो बात फैलि गई जानत सब कोई।
अँसुवन जल सींचि-सींचि प्रेम-बेलि बोई॥
(मीरा)

अंत में एक ही गुरु रहने से यही प्रभाती भी बन जाती है।

'ठुमुकि चलत रामचंद्र बाजत पैजनियाँ।
धाय मातु गोद लेत दशरथ की रनियाँ॥
तन मन धन वारि मंजु बोलती बचनियाँ।
कमल बदन बोल मधुर, मंद सी हँसनियाँ॥
(तुलसी)

१० राधिका

इस छन्द के प्रत्येक चरण में २२ मात्राएँ रहती हैं। तेरह मात्राओं पर विश्राम होता है। अंत में दो गुरु रखने से सौन्दर्य बढ़ जाता है। जैसे—

गोकर्ण निवासी शिव को गान सुनाने।
दक्षिण-सागर-तट, वीणामृत बरसाने॥
उस समय सूर्य का उदय–अस्त पथ धारे।
नारद मुनि दूजे सूर्य-समान सिधारे॥
(मैथिली-शरण गुप्त)

११ रोला

इस छन्द के प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएँ होती हैं। ग्यारह मात्राओं पर विश्राम होता है। जैसे—

विमल अम्बु-सर मुकुरन मँह मुख-बिम्ब निहारति।
अपनी छवि पै मोहि आप हीं तन-मन वारति॥
यही स्वर्ग सुर-लोक यही सुर-कानन सुन्दर।
यहि अमरन को ओक यहीं कहुँ बसत पुरन्दर॥

(श्रीधर पाठक)

नोट—इसी छन्द के प्रत्येक चरण के अंत में यदि दो गुरु हों, तो वह काव्य छन्द कहाता है। जैसे—

सुनकर धनु टंकार मेदिनी थर्राती थी॥
दिग्दन्ती की द्विगुण दलक उठती छाती थी॥
विशिख-वृन्द से नभ-मंडल था पूरित होता
जो था दश दिशि बीच बहाता शोणित सोता॥

(हरिऔध)

१२ दिगपाल

इसके प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएँ रहती हैं, बारह-बारह मात्राओं पर विश्राम होता है। अन्त में गुरु रहना अच्छा समझा जाता है। इसका दूसरा नाम रेखता है। जैसे—

बादल हवा के ऊपर हो मस्त छा रहे हैं।
झड़ियों की मस्तियों से धूमें मचा रहे हैं।
पड़ते हैं पानी हरजा जल थल बना रहे हैं।
गुल्ज़ार भीगते हैं सब्ज़े नहा रहे हैं।
क्या-क्या मची है यारो ! बरसात की बहारें।

—नज़ीर

१३ रूपमाला

इसके प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएँ होती हैं। १४ मात्राओं पर विश्राम होता है। अन्त में एक गुरु और एक लघु का होना उचित है। जैसे—

पौरवों के हाथ जबतक है सु-शासन-भार।
कौन करता है यहां पर ढीठ अत्याचार॥
देखकर आया अचानक भूप को निज गेह—
चौंक कर आदर दिया सब ने उन्हें सस्नेह॥

—मैथिली शरण गुप्त

१४ गीतिका

इस चन्द के प्रत्येक चरण में २६ मात्राएँ होती है। चौदह मात्राओं पर विश्राम होता है। कर्ण-मधुर बनाने के लिये इस छंद की ३ री, १० वीं, १७ वीं और २४ वीं मात्राओं में लघु रख कर अन्त में रगण का देना अच्छा होता है।

जैसे—

देख बेपुर और कालीकट नगर सिरमौर को,
चल पड़े रत्नागिरी टेलीचरी मँगलौर को।
गैल में नाले, नदी, नद, स्वच्छ-जल-पूरित पड़े।
सैकड़ों एला सुपारी नारियल केला खड़े॥

—नाथू राम शंकर

१५ सार

इसके प्रत्येक चरण में २८ मात्राएँ होती हैं। अन्त में दो गुरु रहते हैं। १६ वीं मात्रा पर विश्राम पड़ता है। जैसे—

मृगया-रत दुष्यंत भूप को एक कृष्ण-मृग मन भाया
होम-धूम-धूसरित कण्व के पुण्याश्रम में ले आया।
मृग के बदले मृगनयनी को वहाँ महीपति ने पाया।
और यहाँ श्री कालिदास ने श्रवण-सुधा-रस बरसाया॥

—मैथिली शरण गुप्त

१६ विधाता

इसके प्रत्येक चरण में अट्ठाइस मात्राएँ होती हैं। चौदह-चौदह मात्राओं पर विश्राम दिया जाता है। पहली, आठवीं और पन्द्रहवीं मात्राएँ लघु होने से छन्द कर्ण मधुर होता है।

यथा—

भलाई को न भूलेंगे, सुशिक्षा को न छोड़ेंगे।
हठीले प्राण खो देंगे, प्रतिज्ञा को न तोड़ेंगे॥

बढ़ेंगे प्रेम के पौधे, दया के फूल फूलेंगे।
भरे आनंद से चारो, फलों के झाड़ झूलेंगे॥

—नाथूराम 'शंकर'

नोट—यही तर्ज़ ग़ज़ल का भी है।

१७ हरिगीतिका

इसके प्रत्येक चरण में २८ मात्राएँ होती है और १६ मात्राओं पर विश्राम होता है। अंत में एक लघु और एक गुरु रहना चाहिये। छन्द की सुन्दरता के लिये प्रत्येक चरण की ५ वीं, १२ वीं, १९ वीं और २६ वीं मात्राओं को लघु रखना अच्छा होता है।

नोट—'हरिगीतिका' शब्द को चार बार रखने ही से इस छन्द का एक चरण बन जाता है। जैसे—

हरिगीतिका हरिगीतिका हरिगीतिका हरिगीतिका।

उदाहरण—

जो थे सभी के अग्रगामी आज पीछे हैं वही।
है दीखती संसार में विपरीतता ऐसी कहीं?
निज पूर्वजों के सद्गुणों का गर्व जो रखती नहीं,
वह जाति जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं

(भारत-भारती)

१८ चौपैया

इसके प्रत्येक चरण में ३० मात्राएँ होती हैं। १०, ८ और १२ मात्राओं पर विश्राम होता है। अन्त में एक सगण और एक गुरु रहने से मधुरता बढ़ती है। जैसे—

भौ प्रगट कृपाला, दीन दयाला, कौसल्या हितकारी।

—तुलसीदास

१६ ताटंक

१६ और १४ मात्राओं के विश्राम से ४० मात्राओं का 'ताटंक' छंद होता है। अन्त में एक मगण रखने से इसकी शोभा बढ़ जाती है, परंतु यह कोई विशेष नियम नहीं है। इसीका नाम 'लावनी' भी है। जैसे—

इन्द्रासन के इच्छुक किसने करके तप अतिशय भारी।
की उत्पन्न असूया तुझमें—मुझसे कहो कथा सारी॥
मेरा यह अनिवार्य शरासन पांच कुसम-सायक धारी।
अभी बना लेवे तत्क्षण ही उसको निज आज्ञाकारी॥

—पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी

२० वीर छन्द

इसके प्रत्येक चरण में ३१ मात्राएँ होती हैं। १६ और १५ मात्राओं पर विश्राम है। अंत में एक गुरु और एक लघु का रहना आवश्यक है। इसी का दूसरा नाम 'पँवार' या 'आल्हा' है।

जैसे—

पुत्रों का कल्याण सोचकर, नव साहस कीजिये प्रदान।
रण में जियें, मरें, या कुछ हो, पर न तुम्हारा भूलें ध्यान॥
हे भगवान, विश्व में गूँजे, इसी पवित्र गान की तान।
जय-जय मातृभूमि जय भारत, जय-जय प्यारे हिन्दुस्तान॥

—रसिकेन्द्र

२१ त्रिभंगी

इसके प्रत्येक चरण में ३२ मात्राएँ होती हैं। १०, ८, ८ और ६ मात्राओं पर विश्राम होता है। अंत में एक गुरु रहना चाहिये। आदि में जगण न रहना चाहिये। जैसे—

परसद पद पावन, शोक नसावन, प्रगट भई तप, पुंज सही।
देखत रघुनायक, जन सुखदायक, सनमुख ह्वै कर, जोरि रही॥
अति प्रेम अधीरा, पुलक शरीरा, मुख नहिं आवै, बचन कही।
अतिशय बड़ भागी, चरणनि लागी, जुगुल नयन जलधार बही॥

—तुलसीदास

☞कभी-कभी कविलोग उमंग में आकर संकर छन्दों की भी रचना कर डालते हैं। जैसे संस्कृत में इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा मिले हुए छन्द 'उपजाति' के नाम से विदित हैं, उसी प्रकार भिन्न भिन्न छन्दों को मिलाकर हिन्दी में भी नये-नये 'संकर' छन्दों की सृष्टि हो रही है। किन्तु जहाँ तक हो सके शास्त्र की मर्याद उल्लंघन नहीं करना ही अच्छा है।

अर्द्धसम छन्द

जिस मात्रिक छन्द के प्रथम चरण और तीसरे चरण की तथा दूसरे चरण और चौथे चरण की समता हो, उसे मात्रिक 'अर्द्ध सम' छन्द कहते हैं।

१ बरवै

विषमें बारह मात्रा, सम में सात।
उसको कविगण बरवा, कहते ख्यात॥

इस छन्द के प्रथम और तीसरे चरण में १२, १२ और दूसरे तथा चौथे में सात-सात मात्राएँ होती हैं एवं इन दोनों चरणों के अंत में जगण होने से यह छन्द अति मधुर हो जाता है।

यथा—

सघन कुंज अमरैया, सीतल छाँह।
झगरत आइ कोइलिया, पुनि उड़ि जाह॥
बन-बन फूलहिं टेसुआ, बगियन बेलि।
चले विदेश पियरवा, फगुआ खेलि॥ (रहीम)

नोट—(१) इसी छन्द के दूसरे और चौथे चरणों के अंत में सगण रखने से 'मोहिनी' छन्द बन जाता है। यथा—

शंभु भक्त-जन-त्राता, सब दुख हरें।
मन-वांछित फल-दाता, मुनि हिय धरें॥ (भानु)

(२) इसी छन्द के दूसरे और चौथे चरणों में ९-९ मात्राओं के रखने से 'अति बरवै' छन्द बन जाता है। यथा—

कवि समाज को बिरवा, भल चले लगाय।
सींचन की सुधि लीजो, कहुं मुरझि न जाय॥

२ दोहा

विषम पदों में तीन दश, समकल ग्यारह जान।
'दोहा' दुहराता विषम, विषम सु-सम सम मान॥

पहले और तीसरे चरणों में १३-१३ मात्राएँ तथा दूसरे और चौथे चरणों में ११-११ मात्राएँ जिसमें हो, उस छन्द को 'दोहा' कहते हैं।

जगत जनायो जिहिं सकल, सो हरि जान्यौ नाँहि।
ज्यों आँखिन सब देखिये, आँखि न देखी जाँहि॥

वा— (बिहारीलाल)

बनना चाहो वीर जो, करना गौरव-त्राण।
या कर धारो लेखनी, या विकराल कृपाण॥

(रामनरेश त्रिपाठी)

नोट—यह छन्द दो ही पंक्तियों (दलों) में लिखा जाता है और दुहरा-दुहरा कर अर्थात् सम मात्रा के पीछे सम और विषम मात्रा का प्रयोग होता है इसीलिये इसका नाम 'दोहा' है। इसके प्रथम और तीसरे चरणों के अंत में सगण, नगण अथवा रगण हो तथा दूसरे और चौथे चरणों के अंत में जगण अथवा तगण का होना आवश्यक है। नर-

काव्य में पहले और तीसरे चरणों के आदि में जगण होने से उसका नाम 'चांडालिनी दोहा' है और वह अशुभ है। किसी भी छन्दों की रचना करने के पहले उनके लय पर पूरा ध्यान रखना आवश्यक है।

३ सोरठा

'दोहा उल्टा सोरठा'

यह छन्द दोहेका ठीक उलटा है। इसके पहले और तीसरे चरणों में ११-११ तथा दूसरे और चौथे चरणों में १३-१३ मात्राएँ होती हैं। इसमें 'तुक' मिलाने की आवश्यकता पहले और तीसरे चरणों के अंत में ही होती है। जैसे—

मुकुति जन्मु महि जानि, ग्यान खानि अघ हानिकर।
जँह बस संभु भवानि, सो कासी सेइय कस न॥
(तुलसी)

४ उल्लाला

दो विषम पदनि पन्द्रह कला, सम में तेरह जानिये।
विषम पदों में तेरहौ, 'उल्लाला' में मानिये॥

इस छन्द के पहले और तीसरे चरणों में १५-१५ तथा दूसरे और चौथे चरणों में १३-१३ मात्राएँ रक्खी जाती हैं। किन्तु चारों चरणों में १३-१३ मात्राएँ देने से भी यह छन्द बनता है। यथा— (१, ३ चरणों में १५ मात्रा)

सो को कवि जो छवि कहि सके, ता छिन जमुना नीरकी।
मिलि अवनि और अंबर रहित, छवि इक-सी नभ तीरकी॥
(भारतेन्दु)

(सब चरणों में १३ मात्रा)

अब इतनी विनती सुनो, अहो पवरि तुम चतुर नर।
मित्र-मिलन के काज ते, हौं आयो हरिद्वार पर॥

(हलधर दास—सुदामाचरित्र)

५ रुचिरा

इसके पहले और तीसरे चरणों में १६-१६ तथा दूसरे और चौथे में १४-१४ मात्राएँ होती हैं। अंत में दो गुरु भी रहते हैं। यथा—

हरिहर भगवत सुन्दर स्वामी, सब के घट की तुम जानो।
मेरे मन की कीजे पूरी, इतनी हरि मेरी मानो॥

(छन्द-प्रभाकर)

विषम पद

चार चरणों से कम या वेशी चरण वाले छन्द मात्रिक 'विषम-पद' कहलाते हैं। इनमें से कुछ प्रचलित छन्दों के लक्षण उदाहरण के साथ लिखे जाते हैं।

१ कुंडलिया

एक दोहा और एक रोला मिलाने से 'कुण्डलिया' छन्द बनता है। परन्तु दोहे के अंतिम चरण का सिंहावलोकन रोले के प्रथम चरण में करना होता है अर्थात् जो दोहे का चौथा चरण

होता है, वही रोले के प्रथम चरण में अविकल उद्धृत किया जाता है। दोहे का पहला पद रोला के अन्त में रक्खा जाता है। यथा–

साँई बैर न कीजिये, गुरु पण्डित कवियार।
बेटा, वनिता, पौरिया, यज्ञ करावन हार॥
यज्ञ करावन हार, राजमन्त्री जो होई।
विप्र परोसी वैद्य, आप जो तपै रसोई॥
कह गिरिधर कविराय, युगन ते यह चलिआई।
इन तेरह सों तरह दिये, बनि आवैं साई॥
(गिरिधर राय)

नोट—इस छन्द में यदि रोला के भी दूसरे चरण के अंतिम पद की आवृत्ति उसीके तीसरे चरण के आदि पद से होजाय तो वह छन्द 'कुण्डली' कहाता है।

२ छप्पय

इसके छः चरण होते हैं। रोला और उल्लाला छन्दों के मेल से यह छन्द बनता है। इसको 'षट्पद' भी कहते हैं। यथा—

अहो दयामय धर्मराज तुम आज कहाँ हो?
पांडु-वंश के कल्पवृक्ष महराज कहाँ हो?
विना तुम्हारे आज यहाँ अनुचरी तुम्हारी।
होकर यों असहाय हाय! पाती दुख भारी॥
जो सर्व गुणों के शरण तुम, विद्यमान होते यहाँ।
तो इस दासी पर देव! क्यों, पड़ती यह विपदा महा॥
(मैथिलीशरण गुप्त)

आजकल कुछ मिश्रित छन्द भी लिखने की परिपाटी चल पड़ी है, जिसमें पूर्वार्ध रोले में और उत्तरार्ध दोहे में रहता है। अंत में टेक १० मात्राओं का दियाजाता है। जैसे—

है आदर्श अनूप जहाँ की सुयश कहानी।
पाती जिससे सहज अमरता कवि की बानी॥
शुभ्र कीर्ति मेवाड़ की, कर सगर्व कुछ गान।
आज लेखनी! अमरता, करले तू भी पान॥
जन्म सार्थक बना।

—(लोचनप्रसाद पांडेय)

ऐसे-ऐसे पदों को भ्रमर-गीत कहते हैं।

वर्ण-वृत्त

नोट— गणों के विचार में जो गुण-दोष कहे गये हैं, वे केवल मात्रिक छन्दों के लिये ही हैं, वर्ण-वृत्तों के लिये नहीं। परन्तु बड़े-बड़े ग्रंथों की रचना वर्ण-वृत्तों में करने के लिये ऐसा ही छन्द आदि में रखना उचित है, जिसके आदि में शुभगण हो।

१ प्रमाणिका

'जरा लगा प्रमाणिका'

इस छन्द के प्रत्येक चरण में एक जगण एक रगण एक लघु एवं एक गुरु रहते हैं। यथा—

नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलम् ॥
भजामि ते पदाम्बुजं। अकामिनां स्वधामदम् ॥

(तुलसी)

२ शालिनी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में एक मगण, दो तगण और दो गुरु रहते हैं, चार और सात मात्राओं पर विश्राम रहता है। यथा–

धामै धामै रत्न-वेदी सुहावैं।
वेदी वेदी भक्त संवाद गावैं॥
वादे ही सों बोध चित्तै प्रकासै।
बोधै पाये शंभु की मूर्त्ति भासै ॥

(पूर्ण)

३ भुजंगी

"य तीनों लगाओ 'भुजंगी' गुनो।"

तीन यगण, एक लघु और एक गुरु से भुजंगी वृत्त होता है। यथा—

समुत्थान का ज्ञान ही मूल है।
इसे भूल जाना बड़ी भूल है॥
सु-शिक्षा जहाँ है वहीं सिद्धि है।
जहाँ सिद्धि होगी वहीं वृद्धि है॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

४ इन्द्रवज्रा

ताता ज गा गावहु 'इन्द्रवज्रा'

दो तगण, एक जगण और दो गुरु का 'इन्द्रवज्रा' वृत्त होता है। यथा—

वे हाथ ऊँचा अपना उठाये।
दुर्धर्ष मुद्रा मुख की बनाये॥
देखो महासागर से गँभीर।
हैं भीष्म देवव्रत धीर वीर॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

५ उपेन्द्रवज्रा

उपेन्द्रवज्रा 'त त जा ग गो' है

दो तगण, एक जगण और दो गुरुओं का 'उपेन्द्रवज्रावृत्त' होता है। यथा—

दशा न जाती उसकी बखानी।
हुई उसे क्या कुछ आत्म-ग्लानी॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

नोट—इन दोनों छन्दों के मेल से अर्थात् चारों चरणों में कुछ चरण इन्द्रबज्रा और कुछ चरण उपेन्द्रवज्रा में रहने से 'उपजातिवृत्त' होता है।

भीष्म प्रतिज्ञा सुन भीष्म ऐसी। (इन्द्रवज्रा)
हुई अवस्था जिसकी सु जैसी॥ (उपेन्द्रवज्रा)

उसे दिखाना निज शब्द द्वारा। (उपेन्द्रवज्रा)
सामर्थ्य है मित्र नहीं हमारा॥ (इन्द्रवज्रा)

(मैथिलीशरण गुप्त)

६ भुजंग प्रयात

"य चारै वनाओ भुजंग-प्रयात"

चार यगणों का 'भुजंग प्रयात वृत्त' बनता है यथा—

जहाँ कञ्ज के कुञ्ज की मंजुता थी।
लता पत्रिता पुष्पिता गुंजिता थी॥
जहाँ थे हरे कुंज के पुंज प्यारे।
जहाँ कंज थे भृंग की गुंज वारे॥

(अज्ञात)

नोट—यह वृत्त उर्दू में इस बहर से मिलता है—

न छेड़ो हमें दिल दुखाये हुए हैं।
जुदाई के सदमें उठाये हुए हैं॥
मेरा घर कहाँ उनके आने के काबिल।
बुलाऊँ अगर हों बुलाने के काबिल॥

(अज्ञात)

भजुंगप्रयात और भुजंगी मिला कर 'वागीश्वरी वृत्त' होता है। यथा—

यचौ राम लागै सदा पाद पद्मै हिये धारि वागीश्वरी मात को।

नोट—इसी वृत्त का दूसरा नाम 'बहर तबील' है।

७ तोटक

"स गणै श्रुति दो तब तोटक है।" (श्रुति = चार)

चार सगणों का तोटक-वृत्त होता है। यथा—

इस पावस में नभ में रहते।
मन में डर के घन मंडल से।
कर वास रहा विधु क्या क्षिति पै।
सुख से इसके मुख के छल से॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

८ मोतिय दाम

ज चार बना कर 'मोतिय दाम'

चार जगणों का मोतिय दाम वृत्त होता है। यथा—

छल्यौ बलि को नहिं भू-तल नाथ,
छले बलि के कर सों प्रभु आप।
सदा जय पूरन विश्व महेन्द्र,
सदा जय भक्त भविष्य सुरेन्द्र।

(पूर्ण)

९ वंशस्थ

"सुवृत्त वंशस्थ 'जता जरा' है।"

ज गण, त गण, ज गण और र गण का 'वंशस्थ विल' वृत्त होता है। यथा—

मुकुन्द चाहे यदुवंश के बनें,
रहें सदा या वह गोप वंश के।
न तो सकेंगे ब्रज-भूमि भूल वे।
न भूल देगी ब्रज-मेदिनी उन्हें॥

(प्रिय-प्रवास)

१० द्रुतविलंबित

'द्रुत-विलंबित 'ना भ भ रा' रखो।

एक नगण, दो भगण और एक रगण का द्रुतविलंबित वृत्त होता है। यथा—

सरसता-सरिता-जयिनी जहाँ,
नव नवा नवनीत पदावली।
तदपि हा, यह भाग्य-विहीन की
सु कविता कवि-ताप-करी हुई॥

पुनः—

दुखद हैं तुमको जनकात्मजा,
तुरत दूर उसे कर दीजिये
सुखद हो सकती न उलूक को,
नय-विशारद ! शारद-चन्द्रिका॥

(रामचरित उपाध्याय)

नोट—इसी छन्द का नाम 'सुन्दरी' है। किसी-किसी की राय में नगण, दो भगण और एक रगण का यह छन्द होता है।

११ बसन्त तिलका

होती बसंत तिलका 'तभजा ज गा गो।'

एक त गण, एक भ गण, दो जगण और दो गुरुओं का 'बसंत-तिलका वृत्त' होता है। यथा—

जो यूथ मानव स्वकर्म निपीड़नों से
नीचे समाज वपु के पग लों पड़ा है।
देना उसे शरण मान प्रयत्न द्वारा।
है भक्ति लोकपति की पद सेवानाख्या।

(मैथिलीशरण गुप्त)

१२ कनक मंजरी

'नार रला गा' कनक मंजरी।

एक न गण, दो रगण, एक लघु और एक गुरु का 'कनक मंजरी वृत्त' होता है। यथा—

महर नन्द का पुत्र तू नहीं
निखिल सृष्टि का साक्षि रूप है।
उदित है हुआ, वृष्णि-वंश में।
व्यथित विश्व के, त्राण के लिये॥

(श्रीधर पाठक)

नोट—इस छंद में ६ और ५ अक्षरों पर विश्राम होता है।

१३ तरल नयन

न गण निगम तरल नयन

चार नगणों का 'तरल नयन' वृत्त होता है। यथा—

विशिख सदृश परम दुखद।
परुष वचन कह न सुहृद॥
कर सु कथन हृदय-हरन।
सुखद अमृत सदृश वयन॥

(अज्ञात)

१४ मालिनी

न न म य य बनाओ 'मालिनी' मंजु गाओ।

दो नगण, एक मगण और दो यगणों का 'मालिनी वृत्त' होता है। यथा—

प्रिय पति, वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है!
दुख-जलनिधि-डूबी का सहारा कहाँ है?
लख मुख जिसका मैं आज लौं जी सकी हूँ।
वह हृदय हमारा नैन-तारा कहाँ है?

(प्रिय-प्रवास)

१५ मन्दाक्रान्ता

मन्दाक्रान्ता 'म भ न त त गो गा' यती वेद सातै।

एक मगण, एक भगण, एक नगण, दो तगण और दो गुरुओं

का 'मन्दाक्रान्ता वृत्त' होता है। चार और सात अक्षरों पर विश्राम होता है। यथा—

हा ! वृद्धा के अतुल धन ! हा ! वृद्धता के सहारे।
हा ! प्राणों के परम प्रिय ! हा ! एक मेरे दुलारे॥
हा ! शोभा के सदन सम हा ! रूप लावण्य वारे।
हा ! बेटा ! हा ! हृदय धन ! हा ! नैनतारे हमारे॥

(प्रियप्रवास)

१६ शिखरिणी

"य मी ना, सो, भो, ला, ग सहित सदा, है शिखरिणी"

एक यगण, एक मगण, एक नगण, एक सगण, एक भगण, लघु और एक गुरु का शिखरिणी वृत्त होता है। छः और ग्यारह मात्राओं पर विश्राम होता है। यथा—

अनूठी आभा से सरस सुषमा से सुरस से।
बना जो देती थी बहुगुणमयी भू विपिन को॥
निराले फूलों की विविध दलवाली अनुपमा।
जड़ी बूटी नाना बहु फलवती थीं विलसती॥

(प्रियप्रवास)

१७ शार्दूल विक्रीड़ित

"मो सा जा स त ता गँभीर रचलो शार्दूल विक्रीड़ित।"

एक मगण, एक सगण, एक जगण, एक सगण, दो तगण और एक गुरु का 'शार्दूल विक्रीड़ित वृत्त' होता है। यथा—

श्री श्री हर्ष नरेश की विदित है, रत्नावली नाटिका।
है साहित्य विभाग में वह यथा श्रृंगार की वाटिका॥
है सारा इसका चरित्र उसमें आनंददायी महा।
देते हैं हम सार आज उसका थोड़ा उसी से यहाँ॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

१८ स्रग्धरा

मा रा भा ना य यू या रचहु इनहिं दे 'स्रग्धरा' छन्द जानो।

एक मगण, एक रगण, एक भगण, नगण और तीन यगण का 'स्रग्धरा' वृत्त होता है। यथा—

धारैं चन्द्रांशु भालैं शिरहु सुरनदी, शीतता आश लाई।
पैसो नाहीं जटा से डग इकहु डिगी अंग तापैं डराई॥
याते प्राणान्त इच्छा गरल जउ पियैं सोउवासी ग्रिवाके।
ऐसे प्यारी वियोगैं शिव सुखद रहैं शांति ते शांति पाके॥

(भर्तृहरि-निर्वेद)

१९ सवैया

२२ वर्णों से लेकर २६ वर्णोंतक के कई एक वर्णवृत्त सवैया के नाम से विख्यात हैं। उनके कई भेद हैं। नीचे उनके मुख्य भेदों के लक्षण और उदाहरण लिखे जाते हैं।

नोट—सवैया और कवित्त तुकांत ही श्रवण मधुर होते हैं।

(१) मदिरा

सात रचो पुनि, भागन को इक अंत गुरु यह है मदिरा।

इसके प्रत्येक चरण में सात भगण और एक गुरु रहता है।
जैसे—

'भासत गौरि गुसाँइन को वर राम दुहू धनु खंड कियो।
मालिनि को जयमाल गुहौ हरिके हिय जानकि मेलिदियो॥
रावण की उतरी 'मदिरा' चुपचाप पयान जु लंक कियो।
राम वरी सिय मोद भरी नभ में सुर जै जयकार कियो॥

इसके अन्य नाम मालिनी, उमा और दिवा हैं।

(२) मत्तगयंद

सात रचौ भगणौ पुनि अंत में दो गुरु 'मत्तगयंद' विचारो।

इसके प्रत्येक चरण में सात भगण और दो गुरु रहते हैं। अर्थात् 'मदिरा' छन्द के अन्त में एक गुरु और रखना पड़ता है।
जैसे—

सेस महेस गनेस दिनेस सुरेस हु जाहि निरन्तर गावैं।
जाहि अनादि अनंत अखंड अछेद अभेद सुवेद बतावैं॥
जाहि हियै लखि आनन्द ह्वै जड़ मूढ़ हिये 'रसखानि' कहावैं।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छँछिया भरि छाँछ पै नाच नचावैं॥

(रसखान)

नोट—भाषा में कहीं-कहीं लघु को गुरु और गुरु को लघु मानना पड़ता है। अक्षरों के उच्चारण पर ध्यान देना चाहिये।

(३) चकोर

सात रचौ भगणौ पुनि अंत में एक गुरू लघु होत 'चकोर' ॥

सात भगण और अंत में एक गुरु तथा एक लघु रखने से 'चकोर' छन्द होता है। जैसे—

भासत ग्वाल सखागन में हरि राजत तारन में जिमि चंद ।
नित्य नयो रचि रास मुदा ब्रज में हरि खेलत आनंद कंद ॥
या छवि काज भये ब्रज वासि चकोर पुनीत लखैं नँद नंद ।
धन्य वही नरनारि सराहत या छवि काटत जो भव फन्द ॥
(भानु)

(४) किरीट

भा गण आठ 'किरीट' रचो यह पिंगल रीति प्रबीन विचारत ॥

इसके प्रत्येक चरण में आठ भगण रहते हैं। जैसे—

मानुस हौं तो वही 'रसखानि' बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन ॥
जौं पशु हौं तौ कहा बस मेरो चरौं नित नंद की धेनु मँझारन ॥
पाहन हौं तो वही गिरि को जु धस्यौ कर छत्र पुरंदर धारन ।
जौं खग हौं तो बसेरो करौं मिलि कालिंदि कूल कदंब की डारन ॥
(रसखान)

(५) अरसात

भा गण सात रखो रगणै 'अरसात' सदा चरचा करिबौ करै

इसके प्रत्येक चरण में सात भगण और एक रगण होता है।

जैसे—

कानन लौं अँखिया ये तुम्हारी हथेरी हमारी कहाँ लगि फैलिहैं।
मूंदे तऊ तुम देखति हो यह कोर निहारी कहां धौं सकेलिहैं॥
कान्हर हू को सुभाव यहै उनको हम हाथन हो पर मेलि हैं।
राधे जू मानो भलो कि बुरो अँख मींचनो संग तिहारो न खेलि हैं॥

(अज्ञात)

(६) दुर्मिल

सगणौ सजि आठ रचौ मन दै कवि दुर्मिल छन्द वखान करै।

इसके प्रत्येक चरण में आठ सगण होते हैं। जैसे—

अति पूत परस्पर प्रेम रहा, वन के सब जंतुओं के मन में।
वहाँ हिंसक हिंस्र का भाव न था, न अभाव था धर्म का जीवन में॥
विपिनौषधि मिष्ट वनस्पति की, रुचि थी सबको शुचि भोजन में।
समझो न स्वभाव-विरुद्ध इसे, क्या प्रभाव न है तप-साधन में॥

(लोचन प्रसाद पांडेय)

(७) सुन्दरी

पद दुर्मिल अंत में एक गुरू रख के कवि 'सुन्दरि' छन्द बनावै।

इसके प्रत्येक चरण में आठ सगण और एक गुरु रहता है। अर्थात् दुर्मिल छन्द के अंत में एक गुरु और रखना पड़ता है।

जैसे—

सुख शांति रहे सब ओर सदा, अविवेक तथा अघ पास न आवैं।
गुणशील तथा बलबुद्धि बढ़े, हठ वैर विरोध घटैं मिट जावैं॥

सब उन्नति के पथ में विचरें, रति पूर्ण परस्पर पुण्य कमावें।
दृढ़ निश्चय और निरामय हो कर, निर्भय जीवन में जय पावें॥
(मैथिली शरण गुप्त)

(८) सुख

सगणो वसु दो लघु अंत रखो 'सुख छंद' यहै कवि के मन भावन।

इसके प्रत्येक चरण में आठ सगण और दो लघु रहते हैं। जैसे—

सब सों ललुआ मिलि कै रहिये मम जीवन मूरि सुनो मनमोहन।
इमि बोधि खवाय पियाय सखा संग जाहु कहै मुद सों बन जोहन॥
धरि मातु रजायसु सीस हरी नित यामुन कच्छ फिरै सह गोपन।
यहि भाँति हरी जसुदा उपदेशहिं भाषत नेह लहैं सुख सो धन॥
(भानु)

सूचना—कहीं-कहीं कवियों ने ऐसे-ऐसे सवैये भी बनाये हैं, जिनके चारो चरणों में समानता नहीं है, जैसे गोस्वामी तुलसी दासजी की कवित्त रामायण में—

१चरण = जलको गये लक्खन है लड़िका,
परिखौ पिय छाँह घरीक ह्वै ठाढ़े। (सुन्दरी)
पोंछ पसेउ बयारि करौं,
अरु पांय पखारिहौं भू मुरि डाढ़े॥
'तुलसी' रघुवीर प्रिया श्रम जानिकै,
बैठि बिलंब लौं कंटक काढ़े। (सुन्दरी)

जानकी नाह को नेह लख्यौ,

पुलको तन वारि विलोचन बाढ़े

(कवित्त रामायण)

कोई-कोई ऐसे-ऐसे सवैयों को 'उपजाति' कहते हैं, परन्तु महा कवियों के प्रयोग आर्ष होते हैं। अतएव सब के लिये वे प्रयोग मान्य नहीं। सवैयों में एक ही प्रकार के चरण रखना चाहिये।

२० मुक्तक

वर्ण वृत्तों में जो छन्द अक्षरों की गिनती (कहीं-कहीं लघु-गुरु के नियम से भी) से बनाये जाते हैं, वे मुक्तक कहलाते हैं।

(१) मनहर घनाक्षरी

यह छन्द कवित्त के भेदों में से है। ३१ अक्षर प्रत्येक चरण में रहते हैं। आठ,-आठ,-आठ और सात अक्षरों पर विश्राम होता है। इसमें गुरु लघु का नियम नहीं। केवल पदांत में एक गुरु रक्खा जाता है। जैसे—

सुन्दर सुजान पर, मंद मुसकान पर, बाँसुरी की तान पर,
ठौरन ठगी रहै।
मूरति विशाल पर, कंचन सी माल पर, हंसन सी चाल पर,
सोरन खगी रहै॥
भौंहें धनु मैन पर, लोने जुग नैन पर, शुद्ध रस बैन पर
'वाहिद' पगी रहै।

स्याम तन घन पर, साँवरे बदन पर, नंद के नंदन पर,
लगन लगी रहै ॥
(वाहिद)

पुनर्यथा—

कंचन से कांतिमान, कंज से कलेवर का, कैसा रमणीय रूप,
देखिये विचार के ।
अंग-अंग सुंदर सु,-डौल शुभ्र शोभित हैं, लोभित न होते कौन;
लोचन निहार के ॥
अद्भुत सुदेश-देश, भव्य वेश भूषण त्यों, चंदनी दुकूल भाव,
मन के विकार के ।
बातें सभी चित्र में दिखाती हैं विचित्र मित्र, कौशल अपार
गुणागार चित्र कार के ॥
(मैथिलीशरण गुप्त)

सू०—कवित्त में भी लय और तुकांत पर ध्यान देना चाहिये। सम-सम और विषम-विषम पदों का प्रयोग करना चाहिये।

(२) रूप घनाक्षरी

यह भी कवित्त का भेद है। ३२ अक्षर इसके प्रत्येक चरण में रहते हैं। आठ-आठ अक्षरों पर चार विश्राम होते हैं। लघु गुरु का कोई विशेष नियम नहीं। अंत में एक गुरु और एक लघु रहे। जैसे—

बेर बेर बेर लै सराहैं बेर बेर बहु,

'रसिक बिहारी' देन बंधु कँह फेर फेर।
चाखि चाखि भाखैं यह वाहु ते महान मीठो,
लेहु तो लखन यों वखानत हैं हेर हेर॥
बेर बेर देवैं बेर सबरी सु बेर बेर,
तऊ रघुबीर बेर बेर तेहि टेर टेर।
बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो,
बेर बेर जनि लावो बेर लावो कहैं बेर बेर॥
(राम रसायन)

(३) देव घनाक्षरी

यह भी कवित्त का भेद है। इसके प्रत्येक चरण में ३३ अक्षर होते हैं। आठ-आठ-आठ और नौ अक्षरों पर यति होती है। अंत में तीन लघुओं का रहना आवश्यक है। जैसे—

झिल्ली झनकारैं पिक चातक पुकारैं बन,
मोरनि गुहारैं उठै जुगुनू चमकि चमकि।
घोर घनकारे भारे धुरवा धरारे धाय,
धूमनि मचावैं नाचैं दामिनी दमकि दमकि॥
भूकनि बयारि बहै लूकनि लगावै अंग,
हूकनि भभूकनि की उर में खमकि खमकि।
कैसे करि राखौं प्राण प्यारे जसवंत बिना,
नान्हीं नान्हीं बूंद झरैं मेघवा झमकि झमकि॥
(जसवंत सिंह)

(४) अनुष्टुप्

प्रत्येक चरण में आठ-आठ अक्षर होते हैं। पहले और तीसरे चरण का आठवां अक्षर गुरु होना चाहिये। दूसरे और चौथे चरण का सातवां अक्षर सदा लघु रहता है। यथा—

देखो आही गया लोगो, ग्रीष्मकाल भयावना।
संताप नित्य देते ये, मित्र भी शत्रु होगये॥
(अम्बिकादत्त व्यास)

स्वस्तिवाद विरक्तों का, और ही कुछ वस्तु है।
वाक्यों में उनके होता, ईश का एवमस्तु है॥
(मैथिलीशरण गुप्त)

सिंहावलोकन

प्रत्येक चरण का अंतिम पद उसके दूसरे चरण के प्रारंभ में रखना। 'सिंहावलोकन' शब्द का अर्थ सिंह के समान पीछे की ओर देखते हुए आगे चलना है। जैसे—

आवन लागी समा-सुखमा, कुसुमाकर की छवि छावन लागी
छावन लागी सुगंध भली, सुखदाई समीर सुहावन लगी
भावन लागी 'रसाल' की बौर सु भौंर की भीरहु धावन लागी।
धावन लागी पिकाली अरी, हिय कूक कहूक सों अवन लागी॥

'सिंहावलोकन' में पहले चरण का प्रारम्भिक पद भी उस छंद के अंतिम चरण के अंत में आता है।

छन्दो के दोष

१ छन्दो भंग

पिंगल-कथित नियमानुसार छन्दों की मात्राओं और वर्णों की कमी-बेशी होना ही छन्दोभंग दोष है। इस दोष से बचने के लिये संस्कृत के विद्वानों ने तो यहाँ तक लिखा है कि—'अपि माषं मषं कुर्याच्छन्दो भंगं न कारयेत्' अर्थात् 'माष' की आवश्यकता पड़ने पर 'मष' लिखना पड़े तो लिखो किन्तु 'छन्दोभंग' मत होने दो। वास्तव में 'छन्दोभंग' दोष से कविता अप्रिय हो जाती है। न सुनने में अच्छी, न पढ़ने में ही।

२ यतिभंग

किसी शब्द को ऐसे स्थान पर रखना, जहाँ उसके बीच में ही छन्द की यति (विश्राम) पड़जाय, 'यतिभंग' दोष कहलाता है।

मैं भी जाता हूँ प्रया—ग शहर करने सैर।

इस छन्द में 'या' पर यति है और 'ग' अलग हो जाता है। किन्तु 'प्रयाग' को एक स्थान पर रहने से ही अर्थ की सार्थकता है। 'प्रया' और 'ग' के अलग-अलग हो जाने से उन खंडों का कुछ अर्थ नहीं रहजाता। इसी दोष का नाम 'यतिभंग है।

नोट—समस्त पद में यतिभंग नहीं होता। जैसे 'नरपति' समस्त पद है, इस पद में नर के बाद यति पड़े और पति उसके बाद भी आजाये तो कुछ दोष नहीं। किन्तु उसी में 'न' या 'प' के बाद यति हो तो दोष है।

३ निरर्थक शब्दों की भरती

छन्द को पूरा करने के लिये निरर्थक शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये—खोगीर की भरती न हो। जैसे—

'क्या गल्लर कहि टुक्क सुनि, झल्लर भल्लर भाइ।'

यहाँ 'गल्लर', 'टुक्क', 'झल्लर' और 'भल्लर' शब्द निरर्थक हैं।

उर्दू-कविता के सम्बन्ध में दो बातें

हिन्दी और उर्दू में बहुत थोड़ा अन्तर है। उर्दू के प्रसिद्ध विद्वान् मौलाना आज़ाद तो उर्दू को ब्रज भाषा से ही निकली हुई मानते थे। हिन्दी में संस्कृत के शब्दों का प्रयोग अधिकता से होता है और उर्दू में फारसी के शब्दों का। हिन्दी देवनागरी अक्षरों में लिखी जाती है और उर्दू, फारसी अक्षरों में। इन नाममात्र भेदों के सिवा दोनों के क्रिया-पद, विभक्ति, प्रत्यय इत्यादि प्रायः एक-से ही हैं। उर्दू की कविताओं पर भी ध्यान दिया जाय तो हिन्दी कविताओं से थोड़ा-सा ही भेद दृष्टिगोचर होता है। किन्तु फिर भी दोनों भाषाओं की शैली भिन्न-भिन्न होने के कारण, हिन्दी कविता के सब नियम उर्दू की कविताओं में लागू नहीं हो सकते। हाँ, दोनों कविताओं में ध्वनि का साम्य अवश्य पाया जाता है। जहाँ-जहाँ किसी हिन्दी छन्दों की ध्वनि का साम्य उर्दू के प्रचलित छन्दों के साथ है, वहाँ वहाँ उन छन्दों के साथ ही उनका भी दिग्दर्शन कराया गया है।

उर्दू में गद्य को 'नसर' पद्य को 'नज़्म', छन्द को 'बेहर', छन्दों के नियमों को 'इल्म उरूज', एक पद को 'मिसरा', दो पद वाले छन्दों को 'शेर', ३ पद वाले छन्दों को 'मुसल्लिस', ४ पद वाले छन्दों को 'मुरब्बा' ५ पद वाले को 'मुखम्मस', ६ पद वालों को 'मुसद्दस', ७ पद वालों को 'मुसब्बा', ८ पद वालों को 'मुसम्मन' ९ पद वालों को 'मुतस्सा' और १० पद वालों को 'मुअश्शर', शुरू के पदों को 'मतला', और अंत के पदों को 'मक़ता' कहते हैं। छन्दों के लक्षण विचार को 'तक़ती़अ' कहते हैं। छन्दों के चरणांत का पद 'रदीफ' और उपान्त अर्थात् अंतिम पद से पूर्व का पद 'काफ़िया' कहलाता है।

खिल रही है आज कैसी भूमि तल पर चाँदनी।
खोजती फिरती है किसको आज घर घर चाँदनी॥
घन घटा घूँघट उठा मुसकाई है कुछ ऋतु शरद।
मारी मारी फिरती है इस हेतु दर दर चाँदनी॥
(दीन)

यहाँ 'घर' और 'दर' काफिया है। 'चाँदनी' रदीफ है।

रदीफ—चरणांत में निरंतर आता है और उसका अर्थ भी सदैव एक ही रहता है। उक्त कविता में दो जगह 'चाँदनी' है और अर्थ भी एक ही।

काफिया = रदीफ के पूर्व का वह सानुप्रास शब्द है, जो अर्थ के साथ बदलता जावे। उपर्युक्त पद में 'चाँदनी' के पहले 'पर' 'घर' और 'दर' 'काफिये' हैं।

उर्दू में गण को 'रुक्न' कहते हैं और रुक्न का बहुवचन 'अरकान' होता है। 'अरकान', 'मुतहर्रिक' और 'साकिन' दो प्रकार के अक्षरों से बनते हैं। 'मुतहर्रिक', ज़बर (अ), ज़ेर (इ) या पेश (उ) युक्त अक्षरों को कहते हैं 'साकिन' उन अक्षरों का नाम है जो बिना मात्राओं के शब्दों के अंत में रहते हैं। किन्तु संबंधवाची पूर्व शब्दों का अंतिम अक्षर भी 'मुतहर्रिक' हो जाता है। जैसे 'गुल' यहाँ 'गु' 'मुतहर्रिक' और 'ल' 'साकिन' है। किन्तु 'गुल-नर्गिस' में 'गु' और 'ल' दोनों 'मुतहर्रिक' हैं।

उर्दू में गणों के भेद उदाहरणों के साथ दिखाये जाते हैं।

गण	रूप	उर्दू नाम	उदाहरण
मगण	SSS	मफ़ऊलुन	मौलाना
य गण	ISS	फ़ऊलुन	यगाना, करम कर
र गण	SIS	फायलुन्	कर करम
स गण	IIS	फ़यलुन्	सहना, सह कर
त गण	SSI	मफ़ऊल	बाजार
ज गण	ISI	फऊल	कमाल
भ गण	SII	फा (फ़े) लुन्	भीतर, बहतर
न गण	III	फ़अल	नफर

उर्दू में पद विशेषतया मात्रिक छन्दों के समान ही प्रयोग किया जाता है। वर्ण वृत्तों की तरह नहीं। पाठक थोड़ा-बहुत उर्दू की कविताओं के विषय में भी जान जाँय, इसलिये यहाँ उनका दिग्दर्शन मात्र करा दिया गया है।